Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 9.134
Volume - 9, Issue - 2, February - 2026

DOIs:10.2018/SS/202602004 --:-- Research Paper / Article / Review

मालवा क्षेत्र की वैष्णव मूर्तियों का निरूपण

डॉ. अर्चना तिवारी

सहायक आचार्य, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ईमेल – drarchanahis@gmail.com

सारांश : यह अध्ययन मालवा क्षेत्र में विकसित वैष्णव मूर्तिकला परंपरा के स्वरूप, शैली और प्रतीकात्मकता को प्रस्तुत करता है। मालवा विशेषतः उदयगिरी, एरण, मंदसौर आदि स्थानों पर विष्णु के अवतारों की मूर्तियाँ वैष्णव भक्ति की सशक्त अभिव्यक्ति हैं। इन मूर्तियों में शंख, चक्र, गदा और पद्म जैसे आयुधों का संतुलित प्रयोग दर्शाया है। शिल्प में गुप्तोत्तर एवं परमार कालीन प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। मूर्तियों के मुखमंडल में सौम्यता, नेत्रों में आध्यात्मिक शांति तथा देह यष्टि में संतुलन प्रमुख विशेषताएँ हैं। वस्त्र-विन्यास, अलंकरण और आभूषण स्थानीय कलात्मक परंपराओं से जुड़े हैं। प्रतिमाओं की स्थापत्य-संलग्नता मंदिर-योजना के अनुरूप है। यह पत्र धार्मिक, कलात्मक और सांस्कृतिक दृष्टि से मालवा की वैष्णव मूर्तिकला की महत्ता को रेखांकित करता है।

मुख्य शब्द : आदिवराह , नरसिंह अवतार, ग्वालियर , उदयगिरी, एरण, मालवा, गुप्तकाल, परमारकाल ।

प्रत्येक देश की कला की अपनी कुछ मौलिक विशेषतायें होती हैं जिनके आधार पर उन्हें पहचाना जा सकता है ये विशेषतायें उसे स्वतंत्र व्यक्तित्व प्रदान करती हैं। "मूर्ति निर्माण में आरंभ से ही मनुष्य के मुख्यतः दो उद्देश्य रहे हैं एक तो किसी स्मृति या अतीत को जीवित बनाए रखना दूसरे अमूर्त को मूर्त रूप देना, अव्यक्त को व्यक्त करना अर्थात् किसी भाव को आकार प्रदान करना । मूर्तिकला में ऐतिहासिक मूर्तियाँ पहले उद्देश्य के अन्तर्गत और धार्मिक मूर्तियाँ दूसरे सिरे के अन्तर्गत आती हैं । हमारे देश की मूर्तिकला में मुख्यतः इसी दूसरे लक्ष्य की ओर सारा ध्यान रखा गया है । भौतिक रूप का निदर्शन न करके तात्विक रूप का निदर्शन ही उसका मुख्य उद्देश्य है ।[1]

भारतीय परम्परा में मूर्तिकला को स्वतंत्र कला के रूप में नहीं स्वीकार कर वरन् उसका परिगणन वास्तुकला के अन्तर्गत ही किया गया है । भारतीय मूर्तिकला भी प्रायः उतनी ही प्राचीन है जितनी वास्तुकला । प्राचीन काल से ही भारतीय मूर्तिकला की सबसे बड़ी विशेषता यही रही है कि मूर्तियों के निर्माण में विभिन्न द्रव्यों, धातुओं और रत्नों का प्रयोग होता रहा । मूर्ति निर्माण कला सम्बन्धी सामग्री का ज्ञान हमें पुराणों आगमों, तंत्र ग्रन्थों व शिल्प शास्त्र आदि में प्राप्त हो जाता है। प्राचीन काल में मूर्ति निर्माण में धार्मिक भावना की प्रधानता रहती थी। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों के अनुसार- "मूर्तिकार को देवताओं की प्रतिमायें तरुण ही बनानी चाहिये"।[2]

भारतीय मूर्तिकला में आध्यात्मिकता का जनजीवन के साथ सामंजस्य स्थापित है । कला का आधारभूत विषय निःसंदेह सदा धार्मिक रहा है किन्तु उस विषय के प्रतिपादन में आध्यात्मिक भावना और जीवन के अनुभव तथा तथ्यपूर्ण बातें सब एक सुसंगत समष्टि के अन्तर्गत हैं ।[3]

मालवा क्षेत्र की मूर्तिकला भारतीय शिल्प परंपरा की एक समृद्ध और विशिष्ट धारा है जिसका विकास प्राचीन काल से मध्यकाल तक निरंतर होता रहा। यहाँ की मूर्तियों में गुप्तोत्तर, परमार तथा चालुक्य कला-शैलियों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। मालवा की मूर्तिकला में देवी-देवताओं, विष्णु के अवतारों, शैव प्रतिमाओं तथा जैन तीर्थंकरों का सुंदर और संतुलित निरूपण मिलता है। भावाभिव्यक्ति, सौम्यता, अलंकरण की सादगी तथा स्थानीय शिल्प परंपरा इसकी प्रमुख विशेषता है। उज्जैन, धार, मांडू और आसपास के क्षेत्र मालवा मूर्तिकला के महत्वपूर्ण केंद्र रहे हैं।

गुप्त साम्राज्य के अन्तर्गत मालवा प्रदेश में एरण उदयगिरि, दशपुर (मंदसौर), विदिशा बाघ आदि केन्द्रों में विभिन्न धर्मों से सम्बन्धित देवी देवताओं तथा जन-जीवन को उद्घाटित करने वाली मूर्तियों का निर्माण किया गया। अपनी कल्पना शक्ति के माध्यम से कलाकारों ने प्रतीक स्वरूप नाना रूप नामों की मूर्तियों का निर्माण किया तथा उनमें मानवीय भावों का आरोपण किया। जन साधारण के लिये धार्मिक एवं दार्शनिक विषयों को जो अति दुरुह थे, बोधगम्य बनाने में मूर्तियाँ बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई। देव भाव से उन मूर्तियों का पूजन-अर्चन किया जाने लगा। तथा आध्यात्म प्राप्ति के लिये यह एक उपादेय सम्बल माना गया। मालवा के विभिन्न स्थलों से प्राप्त बौद्ध, जैन, हिन्दू मूर्तियों में विशेषकर वैष्णव मूर्तियों के आधार पर उनकी कलागत विशेषताओं का विवेचन किया जा सकता हैं।

मालवा क्षेत्र की मूर्तिकला में विष्णु के व्यूहों - वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का प्रतीकात्मक और सैद्धांतिक निरूपण मिलता है । ये व्यूह सामान्यतः विष्णु की केंद्रीय प्रतिमा के साथ सहायक रूपों या आयुध–प्रतीकों के माध्यम से दर्शाए गए हैं। मालवा की प्रतिमाओं में शंख, चक्र, गदा और पद्म के संतुलित प्रयोग के साथ शांत भाव, सुदृढ़ देह-रचना और सीमित अलंकरण दिखाई देता है। परमार कालीन शिल्प में वैष्णव दर्शन के पंचरात्र सिद्धांत का प्रभाव स्पष्ट है जो व्यूह अवधारणा को मूर्त रूप प्रदान करता है। उज्जैन, धार और मांडू से प्राप्त प्रतिमाएँ इस परंपरा के महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

व्यूह—संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा साक्षात् विष्णु—को विष्णु के चार प्रमुख व्यूह माना जाता है। उत्तर गुप्त काल तक इनकी संख्या चार से बढ़कर चौबीस हो गई। इसी कारण चौबीस व्यूहों का मूर्तिकला में अंकन गुप्तकाल से पूर्व उपलब्ध नहीं होता। बृहत्संहिता नामक ग्रंथ, जिसकी रचना लगभग पाँचवीं शताब्दी ईस्वी में मानी जाती है, में विष्णु मूर्ति तथा विष्णु के चार व्यूहों का उल्लेख प्राप्त होता है। दसवीं शताब्दी ईस्वी में निर्मित मंदिरों में प्राप्त चतुर्विंशति व्यूह मूर्तियाँ भी इस तथ्य की पुष्टि करती हैं कि चौबीस व्यूहों की मूर्तियों का प्रचलन तथा मूर्तिकला में उनका विधिवत् निरूपण उत्तर गुप्त काल की देन है। चतुर्वर्ग चिंतामणि, देवतामूर्ति प्रकरण एवं रूप मंडन जैसे प्रतिमा-विज्ञान के ग्रंथ जो तेरहवीं से पंद्रहवीं शताब्दी ईस्वी के मध्य रचित हैं, में भी विष्णु के विभिन्न व्यूह रूपों का विस्तृत वर्णन मिलता है, जो इस परंपरा की पुष्टि करता है। उपर्युक्त प्रतिमा-विज्ञान ग्रंथों एवं विविध वैष्णव पुराणों में इन चौबीस मूर्तियों की विविधता आयुधों के क्रम में परिवर्तन के माध्यम से व्यक्त की गई है। विष्णु की मूर्तियों के चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा तथा पद्म जैसे आयुधों को दर्शाया गया है। व्यूह स्वरूपों का विकास वैष्णव धर्म के दार्शनिक पक्ष को मूर्त रूप प्रदान करने के उद्देश्य से हुआ जबकि अवतारों की कल्पना विष्णु को सामान्य जन से जोड़ने एवं लोक कल्याण के संदर्भ में अवतरित होने की भावना से की गई। अवतार संकल्पना के कारण ही अनेक धार्मिक, ऐतिहासिक एवं पौराणिक महापुरुषों का समावेश विष्णु के अवतारों के रूप में किया गया। विष्णु के अवतारों का वर्गीकरण उनके स्वरूप एवं उद्देश्य के आधार पर निर्धारित किया जाता है।[4]

गुप्त वंश के अधिकांश शासक वैष्णव धर्म के अनुयायी थे। इसलिए उनके शासनकाल में वैष्णव धर्म का विकास होने के साथ ही भगवान विष्णु और उनके विभिन्न अवतारों की भावपूर्ण मूर्तियों का निर्माण भी प्रारंभ हुआ। विष्णु प्रतिमा निर्माण का प्रथम उल्लेख 'बृहत्संहिता' में प्राप्त होता है । इसके अनुसार विष्णु की मूर्ति में आठ, चार या दो हाथ हो सकते हैं। ये वक्षस्थल पर श्रीवत्स या कौस्तुभमणि, पीत वस्त्र, कान में कुण्डल तथा रत्न जड़ित मुकुट से सुशोभित होती हैं। यदि आठ भुजाओं वाली हो तो दाहिने हाथों में खड्ग, गदा, बाण तथा एक हाथ अभयमुद्रा में होता है। बाएँ हाथों में धनुष, ढाल, चक्र एवं शंख रहते हैं। चतुर्भुज मूर्ति में दाहिने हाथों में एक अभयमुद्रा तथा दूसरा गदा धारण करता है जबकि वाम हाथ शंख एवं चक्र लिए होते हैं। द्विभुज वाली मूर्ति में दाहिना हाथ अभयमुद्रा में तथा बायाँ हाथ शंख ग्रहण करता है।

ऐसी प्रतिमाएँ गुप्तकालीन मंदिरों की शोभा बढ़ाती रहीं और वैष्णव भक्ति को प्रेरित करती रहीं।[5] मालवा में विष्णु की अधिकांशतः द्विभुजी और चतुर्भुजी मूर्तियों का निर्माण किया गया था जो बृहत्सहिता के विवरण से अधिक साम्य रखती है। ये मूर्तियाँ मुख्यतः स्थानक (खड़ी हुई), आसन (बैठी हुई), शयन (लेटी हुई) तथा अवतारी रूपों में निर्मित है।[6] विष्णु की अवतार मूर्तियों में मालवा क्षेत्र में वराह मूर्तियों पर विशेष बल दिया गया है। वराह मूर्तियाँ दो प्रकार की हैं। नृवराह प्रकार की मूर्तियों में शरीर तो मनुष्य का है किन्तु मुख वराह का है। द्वितीय प्रकार की वराह मूर्ति एरण से प्राप्त हुई है जिसका निर्माण मातृ विष्णु के छोटे भाई धन्य विष्णु ने करवाया था। वराह के साथ-साथ वराही की मूर्तियाँ एरण से मिली हैं।"[7] विष्णु की प्राचीनतम् स्थानक मूर्ति भोपाल राज्य में उदयगिरि गुफा के अग्रभाग पर द्वार के दोनो और द्वारपालों के बगल में उत्कीर्ण है। दाहिनी ओर चतुर्भुजी विष्णु की उत्कीर्ण मूर्ति के आगे के दोनो हाथ कटिविनयस्थ हैं और पीछे के दोनो हाथ नीचे की और हैं जो असाधारण रूप से लम्बे हैं। पीछे के दाहिने हाथ में गदा और बांए हाथ में चक्र है और दोनो का अंकन आयुध पुरुष के रूप में हुआ है।

यह मूर्ति गुप्त शासकों की वैष्णव भक्ति और शिल्प कौशल का प्रतीक बनी हुई है।[8] उदयगिरि की तेरहवीं गुफा की शेषशायी विष्णु की यह मूर्ति बारह फीट लम्बी है। विष्णु भगवान शेषनाग की कुण्डली पर लेटे हुए हैं और उनका सिर चारों हाथों में से एक की हथेली पर स्थित है। उनका वाहन गरुड़ पूर्ण रूपेण पशु आकृति में तथा सात अन्य अस्पष्ट पशु आकृतियाँ उनकी सेवा में अंकित की गई हैं। इसमें देव तथा आयुध पुरुषों की आकृतियाँ दिखाई पड़ती हैं परन्तु इनमें लक्ष्मी तथा ब्रह्मा का अभाव है।[9] इन मूर्तियों के साथ विष्णु के विभिन्न अवतारों की मूर्तियां भी बनाई जाने लगी जो मालवा के विस्तृत क्षेत्र से प्राप्त हुई हैं। ऐसी मूर्तियाँ प्रायः पत्थर के उन खण्डों पर उत्कीर्ण हैं जो वैष्णव मन्दिरों की सजावट के लिये लगाई जाती थीं । मालवा के शैलकृत मन्दिरों में वराह व नरसिंह की बहुत सुन्दर मूर्तियाँ मिलती हैं । वराह की मूर्ति मन्दिर की सजावट के लिये लगाए गए खण्डों पर उत्कीर्ण है।

विष्णु की अवतारी मूर्तियां गुप्तकालीन कला की समृद्धि का प्रतीक हैं और मालवा की धार्मिक व सांस्कृतिक विरासत को जीवंत रखती हैं। ये मूर्तियाँ वैष्णव भक्ति के प्रसार को स्पष्ट करती हैं।

विष्णु की नरसिंह मूर्ति- मालवा क्षेत्र के पुरातात्विक स्थलों से भगवान विष्णु की नरसिंह अवतार की कई उल्लेखनीय मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जो गुप्तोत्तर काल की वैष्णव भक्ति और शिल्पकला की समृद्धि को दर्शाती हैं। एरण से नरसिंह विष्णु की एक भग्न मूर्ति मिली है जो इस अवतार की प्रारंभिक छवियों में से एक है। वहीं, बेस नगर से छठी शताब्दी ईस्वी की एक नरसिंह मूर्ति प्राप्त हुई है जिसमें परवर्ती नरसिंह मूर्तियों की तरह आराध्य को हिरण्यकश्यप का वध करते हुए नहीं अपितु सीधा खड़ा दिखलाया गया है। इस उग्र रूप वाली नरसिंह मूर्ति में उनके बाल बिखरे हुए हैं, गले में कई लड़ियों का मोटा हार शोभित है और दूसरी माला कटिप्रदेश में लिपटी हुई है।

गूजरी महल संग्रहालय, ग्वालियर में सुरक्षित यह नरसिंह प्रतिमा मूर्तिशिल्प का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह मूर्ति न केवल विष्णु के राक्षस-वधकारी स्वरूप को जीवंत बनाती है बल्कि गुप्तकालीन कला से विकसित हो रही स्थापत्य शैली को भी प्रतिबिंबित करती है।[10]

विष्णु की वराह अवतार की मूर्ति- मालवा में विष्णु वराह का दो रूपों में मूर्तन प्राप्त होता है। एक रूप में मानव शरीर के साथ वराह मुख का अंकन हुआ है। इस प्रकार की मूर्ति को भू-वराह अथवा आदिवराह भी कहते हैं।[11] इस प्रकार की एक विशाल मूर्ति उदयगिरि गुफा की बाहरी भित्ति पर उत्कीर्ण है। भिलसा के समीप उदयगिरि के चन्द्रगुप्त गुफा के दरवाजे पर एक भव्य वराह मूर्ति उत्कीर्ण है इस मूर्ति में वराह के अवतार विष्णु का सारा शरीर पुरुष तथा उसका केवल मुख भाग वराह पशु का उत्कीर्ण किया गया है।[12] देवता आदिशेष के शरीर पर खड़ा है। आदिशेष के तेरह फन जिनमें सात सामने तथा छः पीछे की ओर बने हैं। विष्णु का दाहिना हाथ कटि विनयस्थ है तथा बाँया हाथ उनके मुड़े हुए घुटने पर टिका है। उनके गले में रत्न जड़ित चौड़ा कंठा दिखलाया गया है और लम्बी वैजयंती माला उनके घुटनों का स्पर्श कर रही है। आदि शेष के पीछे एक पुरुष मूर्ति है जिसे कनिंघम ने समुद्र का राजा कहा है।[13] वराह की मूर्ति के पास एक भू देवी की आकृति बनी है वासुदेव उपाध्याय पुराणों के अनुसार कहते हैं कि भगवान ने पृथ्वी को बचाने के लिए वराह का अवतार ग्रहण किया भू देवी की आकृति इसी सिद्धांत को लेकर तैयार की गई होगी ।[14] इन देवताओं की मुद्राएँ भक्ति एवं श्रद्धा से परिपूर्ण हैं जो वैष्णव परंपरा में स्वाभाविक है। प्रतिमा के चरणों के समीप शेषनाग अपने फणों को तानकर छत्रछाया प्रदान करते हुए तथा ब्रह्मा अंजलिबद्ध अवस्था में स्थित हैं जो नरसिंह अवतार की सर्वोच्चता एवं विश्वरक्षा के स्वरूप को प्रतीकात्मक रूप से अभिव्यक्त करते हैं।[15]

उदयगिरी गुफा में स्थित विष्णु के वराह अवतार की मूर्ति

एरण से एक ब्राह्मण के घर से वराह-विष्णु की 6 फीट ऊँची 2 फीट 7 इन्च चौड़ी मूर्ति प्राप्त हुई इस मूर्ति की नाक चौकोर है तथा महावराह का मुख सीधा है। अपने बांए हाथ से सागर से पृथ्वी को उठाए हुए प्रदर्शित किया किया है। उसका बांया पैर उठा हुआ है। तथा बाँया हाथ घुटने पर टिका हुआ है और दाहिना हाथ नितम्ब पर स्थित दिखाया गया है। बांए पैर के नीचे समतल भाग पर 'श्री महेश्वर दतस्य वराह दतस्य' लेख उत्कीर्ण है। इस मूर्ति को कनिंघम ने बुद्धगुप्त कालीन माना है।[16]

वराह प्रतिमा चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के शासनकाल की राजनीतिक विजयों का प्रतीकात्मक चित्रण है जिन्होंने शकों का मालवा एवं सौराष्ट्र क्षेत्रों में पूर्णतः नाश कर भारतवर्ष की रक्षा की। ठीक वैसे ही जैसे भगवान विष्णु ने अपने वराह अवतार में हिरण्याक्ष राक्षस द्वारा हर ली गई पृथ्वी का उद्धार किया था। उसी प्रकार चन्द्रगुप्त ने विदेशी आक्रमणकारियों से भारतीय भूमि को मुक्त कराया। गुप्त साम्राज्य की सैन्य शक्ति, वैष्णव भक्ति एवं शासकीय वैभव का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करती है। जीवन, उत्साह एवं सृजनात्मक शक्ति से परिपूर्ण यह असाधारण प्रतिमा न केवल गुप्त सत्ता की शकों पर प्राप्त विजय का द्योतक है, अपितु समकालीन नवीन सांस्कृतिक जागरण एवं आर्थिक समृद्धि का उदबोधक भी है।[17]

विष्णु के उपर्युक्त अवतारों के अतिरिक्त अन्य अवतार भी हैं, परन्तु मुख्य रूप से इन्ही अवतारों से सम्बन्धित मूर्तियाँ मालवा में प्राप्त हुई हैं जिन्हे विभिन्न प्रकार से दर्शाया गया है। विष्णु के अन्य अवतार जिनमें-मत्स्य, कूर्म, कृष्ण, बलराम, परशुराम, वामन, बुद्ध व दाशरथि राम है। जिनमें परशुराम व दाशरथि राम व बलराम उत्तर गुप्त कालीन मूर्तिकला में गौण स्थान रखते हैं।

वैष्णव मूर्तियों के अतिरिक्त मालवा क्षेत्र में शैव मूर्तियाँ जिनमें शिव के अनेक रूपों का अंकन मिलता है। शिव के लिंग विग्रह एवं पुरुष विग्रह दोनों प्राप्त होते हैं। और अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों में गणेश, स्कन्ध, महिषासुरमर्दिनी, गंगा-यमुना की मूर्तियाँ कृष्ण मूर्ति, कुवेर मूर्ति (बाघ की गुफा से प्राप्त हुई है।), जैन मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। इनके अतिरिक्त

बौद्ध मूर्तियाँ जिनमें गौत्तम बुद्ध व बोधिसत्वों की मूर्तियाँ सम्मिलित हैं जिनमें बाघ की बुद्ध मूर्तियाँ, सांची की बुद्ध मूर्तियां हैं व जैन मूर्तियों में उदयगिरि की पार्श्वनाथ मूर्ति, विदिशा की जैन तीर्थंकर प्रतिमाएँ तथा द्वारपालों की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह काल विभिन्न धर्मों की मूर्तियों के निर्माण एवं विकास का काल था। इन मूर्तियों से हमें वैष्णव धर्म व अन्य धर्मों के देवी-देवताओं के वास्तविक स्वरूप का परिचय प्राप्त होता है। ये मूर्तियाँ न केवल मालवा की कलात्मक प्रगति के प्रतीक हैं अपितु प्राचीन भारतीय मूर्तिकला की अमूल्य निधि है।

संदर्भ ग्रन्थ -

1. रामकृष्ण दास, भारतीय मूर्तिकला, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, 2009, पृ. 18-19
2. मीनाक्षी कासलीवाल 'भारती' ललित कला के आधारभूत सिद्धांत, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी,2011 पृ.14
3. आनन्द कुमार स्वामी, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, एडवर्ड गोल्डस्टन लंदन, 1927, पृ. 90
4. नीलिमा वशिष्ठ, राजस्थान की मूर्तिकला परंपरा, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2001 पृ- 57
5. वराह मिहिर, बृहत्संहिता, पृ. 57/31-35; डॉ. कमल कांत शुक्ल, प्राचीन मालवा का ऐतिहासिक एवं कलागत अध्ययन, कला एवं धर्म शोध संस्थान, 1999, पृष्ठ 194
6. जे.एन. बनर्जी, दी क्लासिकल एज, पृ० 428; डॉ. कमल कांत शुक्ल, प्राचीन मालवा का ऐतिहासिक एवं कलागत अध्ययन,कला एवं धर्म शोध संस्थान,1999, इन्प्रेशन ग्राफिक प्राइवेट लिमिटेड वाराणसी-5 पृष्ठ 195
7. डॉ. जयनारायण पाण्डेय, भारतीय कला प्रथम भाग, प्राच्य विद्या संस्थान इलाहबाद, 2000, पृ. 111
8. आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, भाग-10, पृ. 50
9. कनिंघम, आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, भाग-10, पृ. 52
10. डॉ. कमल कांत शुक्ल, प्राचीन मालवा का ऐतिहासिक एवं कलागत अध्ययन, कला एवं धर्म शोध संस्थान, 1999, इन्प्रेशन ग्राफिक प्राइवेट लिमिटेड वाराणसी-5, पृष्ठ 198
11. टी.एन. गोपीनाथ राव, एलिमेन्ट्स ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी, 2 भाग मद्रास, 1914, पृ. 132
12. कनिंघम,आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, भाग-10, पृः 48
13. कनिंघम, आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, भाग-10, पृ 38
14. वासुदेव उपाध्याय, गुप्त साम्राज्य इतिहास भाग-2, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण 1970, पृ- 236
15. भगवत शरण उपाध्याय, गुप्तकाल का सांस्कृतिक इतिहास, हिन्दी समिति लखनऊ प्रथम सं. 1969 पृ. 172-73
16. कनिंघम, आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, भाग-10, पृ. 87-88
17. भगवत शरण उपाध्याय, गुप्तकाल का सांस्कृतिक इतिहास, हिन्दी समिति लखनऊ प्रथम सं. 1969, पृ. 172-73